IJARASEM

ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

Volume 11, Issue 4, July - August 2024

INTERNATIONAL
STANDARD
SERIAL
NUMBER
INDIA

IMPACT FACTOR: 7.583

| www.ijarasem.com | ijarasem@gmail.com | +91-9940572462 |

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, July-August 2024 |

किन्नर साहित्य में सामाजिक चेतना

Indrajeet Yadav

Assistant Professor, Department of Hindi, Shri Dharam Chand Gandhi Jain Govt. College, Behror, Kotputli-Behror, Rajasthan, India

सार: समाज के अनेक उपेक्षित समस्याओं एवं वर्गों पर चिंतन और बहस हो रहे हैं। स्त्री विमर्श, पारिस्थितिक विमर्श, किन्नर विमर्श आदि इनमें प्रमुख है। इन सभी विमर्शो के अन्तर्गत हाशिए पर दबाये हुए एवं तिरस्कृत समुदाय की चर्चा होती है। समाज से बहिष्कृत लिंग निरपेक्ष 'किन्नर विभाग' के संबंध में आज बहुत अधिक चर्चा होती है।

I. परिचय

समकालीन हिंदी कथा साहित्य प्रवृत्तियों की दृष्टि से नारीवाद, आदिवासी और दलित विमर्श, अल्पसख्यक विमर्श के श्रेणीगत सैद्धांतिक ढाँचे में बँध कर रह गया है। उक्त वर्गीकरण विभिन्न विधाओं में रचित साहित्य के शोधपरक अध्ययन के लिए सुविधाजनक है। दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक समुदाय तथा नारीवादी दृष्टि से साहित्यिक विधाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए उपयुक्त सैद्धांतिक ढाँचे को गढ़ लिया गया है। समकालीन हिंदी कहानियों और उपन्यासों का वर्गीकरण इसी आधार पर कर लिया गया। इसी क्रम में भारतीय समाज में मौजूद एक विशेष वर्ग, किन्नर समुदाय का जीवन भी वर्तमान परिदृश्य में हिंदी कथा साहित्य का प्रमुख अंग हो गया है। भारत में किन्नर समुदाय प्राचीन काल से ही अपना जीवन, समाज के अन्य वर्गों के साथ येन-केन प्रकारेण बिता रहा है। इस समुदाय के जीवन की विषमताओं और विसंगतियों की ओर सुसंस्कृत समाज का ध्यान साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत समय तक नहीं गया। यह समुदाय साहित्य की मुख्य धारा में अपनी पहचान दर्ज कराने में असमर्थ रहा। किन्नरों का उल्लेख विविध सदर्भों में भारतीय पौराणिक साहित्य में प्राचीन काल से होता रहा है। रामायण में राम-रावण युद्ध में राम की सैन्य वाहिनी में वानर सेना के साथ कोल, किरात, किन्नर और भील आदि जनजातियों की सेना भी सम्मिलित थी। 'किन्नर' एक वन्य जनजाति के रूप में रामायण महाकाव्य में उल्लिखित है किन्तु यह नपुंसक (हिजड़ा) समुदाय नहीं था। यह बलशाली और वीरता से युक्त जनजाति थी। [1,2,3]

महाभारत कथा में अर्जुन देवलोक में उर्वशी के श्राप से नपुंसक रूप धारण करने को अभिशप्त हो जाता है। अर्जुन की इस स्थिति का सदुपयोग पांडव अपने अज्ञातवास काल में करते हैं। पांडव अज्ञातवास काल में विराट महाराज के आश्रय में रहते हैं जहाँ अर्जुन नृत्यकला के आचार्य वृहन्नला (किन्नर) का रूप धारण कर विराट राजा की सुपुत्री 'उत्तरा' को नृत्य कला में पारंगत कराता है। महाभारत कथा में एक अन्य प्रसंग में महारथी भीष्म द्वारा तिरस्कृत राजकुमारी 'अंबा' अपने अपमान का प्रतिकार लेने के लिए कुरुक्षेत्र के महासंग्राम में नपुंसक शिखंडी के रूप में भीष्म के सम्मुख प्रकट होकर उनके मृत्यु का कारण बनती है। शिखंडी और वृहन्नला दोनों ही किन्नर के रूप में पुराणों में वर्णित हैं। स्त्री और पुरुष के अतिरिक्त मानव समाज में एक और लिंग व्यवस्था सदियों से चली आ रही है जिसे अन्य लिंगी मनुष्य कहा जाता है अर्थात जो न स्त्री हैं और न पुरुष। जननांगों के अभाव, अविकसित या निष्क्रियता से उत्पन्न नपुंसकता से ग्रस्त मनुष्यों को हिजड़ा कहा जाता है। प्रकारांतर से इनके लिए एक सम्मानजनक शब्द 'किन्नर' गढ़ लिया गया। 'किन्नर' शब्द का संबंध हिमाचल प्रदेश के 'किन्नौर' ज़िले से कदापि नहीं है। हिजड़ोण के लिए इस शब्द के प्रयोग पर 'किन्नौर' प्रदेश के लोगों ने आपत्ति की थी। किन्नरों के लिए अँग्रेज़ी का 'थर्ड जेंडर' शब्द बहुप्रचलित है अर्थात तृतीय लिंगी मनुष्य।

किन्नर चाहे किसी भी धर्म का हो, इस समुदाय में शामिल होते ही वह अपने पूर्व धर्म और जाति को छोड़ देता है। इनकी आरध्या देवी 'बहुचरा माता' (बुचरा) कहलाती है। वह इसी देवी की पूजा करते हैं। एक किंवदंती के अनुसार बुचरा माता की तीन अन्य बहनें – नीलिमा, मानसा और हंसा थीं। सबसे बड़ी बुचरा हिजड़ा बन गई तो बची बहनों को भी उन्होंने अपने जैसा बना दिया। इनकी संतानें नहीं थीं तो इन्होंने लड़कों को गोद ले लिया। लेकिन बुचरा माता के मंदिर में निस्संतान दंपति संतान माँगने के लिए जाते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में किन्नरों के लगभग 500 धाम हैं जहाँ उनके नायक या गुरु निवास करते हैं।

बुचरा और उनकी तीन बहनों के आधार पर इनकी चार शाखायें हैं – बुचरा, नीलिमा, मानसा और हंसा। बुचरा की शाखा में पैदाइशी, नीलिमा की शाखा में जबरन बनाए गए, मानसा शाखा में इच्छा से बने और हंसा में उन्हें जगह दी जाती है जो शारीरिक कमी के कारण किन्नर बनते हैं। एक अन्य विभाजन के अंतर्गत नीलिमा शाखा के किन्नर गाने और ढफली बजाने का काम करते हैं तो मानसा शाखा का काम बनने वाले व्यक्ति के लिए सामान इकट्ठा करना है। जब बुचरा किसी को किन्नर बना रहे होते हैं तब हंसा के जिम्मे साफ़-सफ़ाई का काम आता है। साथ ही क़ब्र खोदने और उसमें राख डालने का काम भी केवल हंसा शाखा के किन्नर ही करते हैं, शवों पर पहली मिट्टी डालने का काम बुचरा शाखा के लोग ही करते हैं। किन्नरों की भी एक पारिवारिक व्यवस्था होती है। यह

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, July-August 2024 |

व्यवस्था सामान्यजनों के परिवारों की तरह ही होती है। हर घर या घराने का एक मुखिया होता है। जिसे नायक कहते हैं। नायक के नीचे गुरु होते हैं फिर चेले। गुरु का दर्जा माता-पिता से कम नहीं होता। हर किन्नर को अपने गुरु को अपनी कमाई का एक निश्चित हिस्सा देना होता है। गुरु के नीचे काम करने वाले सभी चेले घराने की बहुएँ कहलाती हैं। घराने के अंदर भाई, बहन, बुआ, चाही, दादा, दादी आदि का अपना स्थान होता है। जो किन्नर पुरुष प्रवृत्ति का होता है उसे भाई कहा जाता है। ऐसे ही महिला प्रवृत्ति के किन्नरों को बहन का ओहदा दिया जाता है।

भारतीय समाज में जननांगों से अपंग शिशुओं को मातापिता द्वारा त्याग दिया जाता है। जननेन्द्रियों से अपंग या जननांग विहीन शिशु के जन्म की ख़बर मिलते ही किन्नर समुदाय उस परिवार से शिशु को माँगकर या बलपूर्वक प्राप्त कर अपने समुदाय में पालन-पोषण करने के लिए लेकर चले जाते हैं। वह शिशु किन्नर प्रथा एवं परंपरा के अनुसार ही स्वयं को पुरुष या स्त्री के रूप में ढालकर विसंगतिपूर्ण जीवन जीने के लिए अभिशप्त हो जाता है। दुनिया के हर देश और समाज में किन्नर समुदाय अनेक उपजातियों में बँटा हुआ है। प्रत्येक उपजाति अथवा उपसमुदाय अपने ढंग से जीवनयापन करता है। इनकी अपनी वेशभूषा, खान-पान और रहन-सहन की संस्कृति होती है जिसका पालन उस समूह के सदस्यों को करना होता है। इन समुदायों के उपसमूहों के नेतृत्व के लिए इनमें आपसी स्पर्धा भी होती है। भारत के महानगरों में किन्नर समुदायों के टोले जगह-जगह दिखाई दे जाते हैं। अक्सर यह लोग चौराहों पर वाहन यात्रियों से पैसे माँगते हुए दिखाई देते हैं। इनके समुदाय शिशु जन्म के अवसर पर लोगों के घरों में बधाई गीत गाकर नवजात को आशीर्वाद देते हैं। इस समुदाय का आशीर्वाद नवजात के लिए कल्याणकारी माना जाता है। बदले में उन्हें कुछ धन की प्राप्ति हो जाती है। अधिकतर किन्नर समुदाय के लोग जिन्हें भिन्न लिंगी मान लिया गया है, इनके लिए 'इतर लिंगी' शब्द का प्रयोग होता है। शासकीय प्रयोजनों के लिए किन्नर समुदाय के लोगों के लिए 'अन्य लिंगी' नामक श्रेणी निर्मित कर दी गयी है। किन्नरों में शिक्षा का नितांत अभाव होता है। [4,5,6]अपवाद स्वरूप यत्रतत्र भारत में शिक्षित व्यक्ति (अन्य लिंगी) दिखाई दे जाते हैं जिनकी संख्या नगण्य है। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी नामक किन्नर (महिला का वेष धारण करती / करता है) जो शिक्षित विदुषी व्यक्ति के रूप में जानी जाती है। इन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान के साथ संगीत और नृत्य शास्त्र का भी अध्ययन किया है। किन्नर समुदाय के अधिकारों के लिए इन्होंने एक सशक्त आंदोलनकारी के रूप में ख्याति अर्जित की है। उज्जैन महाकुंभ सिंहस्थ 2016 में उन्हें महामंडलेश्वर की पदवी प्रदान की गई थी। इनके द्वारा रचित आत्मकथा 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी' हिन्दी किन्नर साहित्य में बहुचर्चित कृति है। नई सदी में कुछ किन्नरों ने अपने कठिन संघर्ष से राजनीति में प्रवेश कर आम चुनाव में बहुमत से विजय प्राप्त कर विधायक और महापौर तक के पद सँभाले जिनमें प्रमुख हैं – शबनम मौसी, कमला जान, कमला किन्नर और मधु किन्नर आदि। देश की पहली किन्नर शिक्षाविद प्राचार्य मानोबी बंद्योपाध्याय (पश्चिम बंगाल) और पहली किन्नर वकील तमिलनाडु की सत्या श्रीशर्मीला ने सिद्ध कर दिया कि किन्नर अथवा 'थर्ड जेंडर' किसी भी विद्वत स्त्री-पुरुष की भाँति बुद्धिजीवी वर्ग के समकक्ष अपनी प्रतिभा प्रदर्शित कर सकते हैं। अस्मिता की यह लड़ाई जो किन्नरों द्वारा लड़ी जा रही है, इन्हें 15 अप्रैल 2014 को विजय हासिल हुई जब सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के एस राधाकृष्णन और न्यायमूर्ति ए के सीकरी ने थर्ड जेंडर को मान्यता देते हुए किन्नरों के हक़ में ऐतिहासिक फ़ैसला दिया।

हिंदी कथा साहित्य में विगत दो दशकों में प्रवृत्तिगत अनेक नए प्रयोग हुए हैं। कहानी और उपन्यास साहित्य में नए सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आयाम जुड़ते गए। दलित चेतना प्रखर रूप में कहानी और उपन्यास के माध्यम से अभिव्यक्त हुई जिसमें प्रतिरोध का स्वर बलवती दिखाई देता है। इसीके समकक्ष आदिवासी जनजीवन पर केन्द्रित कथा साहित्य विपुल मात्रा में रचा गया। अनेक उदीयमान लेखक उक्त समुदायों के उत्पीड़न भरे जीवन के सामाजिक पक्ष को प्रहारक मुद्रा में व्यक्त करते हुए दिखाई देते हैं। दलित चेतनाप्रधान कथा साहित्य में दलित स्त्रियों की अंतरगाथाओं ने अपनी अलग भावभूमि निर्मित की है। आदिवासी कथा साहित्य में वन्य प्रान्तों में बसे जनजातियों से विकास के नाम पर उनकी वन्य भूमि को उनसे छीनने तथा उनके विस्थापन के कारण उत्पन्न दुष्परिणामों की करुण गाथा भारत के वंचित तथा हाशिये पर धकेले गए समाज का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करता है। हाशिये पर के जन समुदायों में किन्नर समुदाय का असंगठित बिखराव भरे जीवन को वर्तमान कथाकारों ने अपनी रचनाओं में चित्रित कर एक नई भावभूमि को आविष्कृत किया है। वर्तमान समय में किन्नर जनजीवन की चुनौतियाँ साहित्य के केंद्र में स्थान पाकर शिष्ट समाज का ध्यान आकर्षित कर रही हैं। किन्नर कथा साहित्य के उदय से आम लोगों में किन्नरों के प्रति घृणा और अलगाव के व्यवहार में परिवर्तन हुआ है। किन्नर व्यक्तियों के प्रति समाज धीरे-धीरे संवेदनशील हो रहा है। किन्नरों के पक्ष में अनेक ग़ैरसरकारी संगठन और सामाजिक कार्यकर्ता आवाज़ उठा रहे हैं इसके बावजूद वे उपहास और तिरस्कार के पात्र बने हुए हैं, यह मानवता की दृष्टि से चिंता का विषय है। हिंदी कथा साहित्य में कुछ चुनिन्दा लेखकों ने भारत के विभिन्न महानगरों में छोटे छोटे कुनबों में बसे विभिन्न किन्नर समुदायों के जीवन को वास्तविकता के धरातल पर चित्रित करने का प्रयास किया है।

मानव सभ्यता के विकास यात्रा में अनेक पड़ाव आते रहे हैं। भूमंडलीकरण की स्थितियों से प्रभावित और परिवर्तित सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश ने हाशिये पर पड़े किन्नर समुदाय के प्रति समाज में मानवीय संवेदनाओं को जगाया है। समाज में परिवर्तन की इस लहर से समाज में उपेक्षित वर्गों को पहचान मिली और निस्संदेह हिंदी के कुछ चुनिन्दा कथाकरों ने इस आंदोलन को साहित्य की मुख्य धारा में स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिंदी में किन्नर जीवन पर आधारित कथा साहित्य का आरंभ 21 वीं शती (नई सदी) में हुआ। विगत शती में स्त्री, दलित और आदिवासी वर्ग को तो विशेष अभिव्यक्ति मिली परंतु किन्नर समाज को हिंदी साहित्य में कोई विशेष अभिव्यक्ति नहीं मिली।

हिंदी में किन्नर समुदाय पर केन्द्रित - यमदीप – 2002 (नीरजा माधव), मैं भी औरत हूँ – 2005 (अनुसूइया त्यागी), किन्नर कथा – 2010 (महेंद्र भीष्म), तीसरी ताली – 2010 (प्रदीप सौरभ), गुलाम मंडी – 2013 (निर्मला भुराड़िया), पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा – 2016 (चित्रा मुद्गल) तथा मैं पायल – 2016 (महेंद्र भीष्म), पंखवाली नाव (पंकज बिष्ट) उपन्यास प्रकाश में आए हैं। ट्रांसजेंडर स्त्री मानोबी बंद्योपाध्याय की बांग्ला से हिंदी में अनूदित आत्मकथा 'पुरुष तन में फंसा मेरा नारी मन '- 2018 (राजपाल प्रकाशन) किन्नर साहित्य में रचित एक मात्र आत्मकथा है। बांग्ला में रचित यह बहुचर्चित आत्मकथा हिंदी के अतिरिक्त अँग्रेज़ी में भी उपलब्ध है।

किन्नर जीवन से संबंधित कहानियों का संग्रह 'थर्ड जेंडर : हिंदी कहानियाँ' (संपादक – डॉ. एम फिरोज खान) उल्लेखनीय है। इस संग्रह में अठारह कहानियाँ संगृहीत हैं जिनके लेखक क्रमश: शिवप्रसाद सिंह, राही मासूम रज़ा, सलाम बिन राजाक, एस आर हरनोट, कुसुम अंसल, किरण सिंह, कादंबरी मेहरा, डॉ. पद्मा शर्मा, अंजना वर्मा, महेंद्र भीष्म (त्रासदी), ललित शर्मा (रतियावान की चेली), डॉ. लवलेश दत्त (नेग), गरिमा संजय दुबे (पन्ना बा), श्रीकृष्ण सैनी (हिजड़ा), विजेंद्र प्रताप सिंह (संकल्प), चाँद दीपिका (खुश रहो क्लीनिक), पूनम पाठक (किन्नर) और पारस दासोत (गलती जो माफ नहीं) हैं।

उपर्यक्त उपन्यासों में किन्नर जनजीवन में व्याप्त शोषण, उपेक्षा, तिरस्कार, घृणा, संघर्ष, जिजीविषा को पूरे सामर्थ्य के साथ प्रस्तुत किया है। उक्त कथाकारों ने मुंबई और दिल्ली महानगरों की किन्नर गंदी बस्तियों में नारकीय जीवन जीने के लिए अभिशप्त किन्नर लोगों की सवेदनाओं, अपेक्षा और आकांक्षाओं का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। जिस तरह किन्नरों में स्वयं को पुरुष या स्त्री का वेश धारण करने की स्वैच्छिक परंपरा विद्यमान है, इनमें जननेन्द्रिय दोष होने के बावजूद विवाह की परंपरा और पति-पत्नी के रूप में जीवन यापन की स्थितियों का चित्रण, किन्नर समाज के समाजशास्त्रीय स्वरूप को पहचानने में सहायक होता है। किन्नरों के यौन शोषण के प्रसंग किन्नर कथा साहित्य में बहुतायत से पाये जाते हैं। राजनेताओं से संबंध रखने वाले प्रभावशाली किन्नर नेताओं के जीवन की कथाएँ भी इस साहित्य में दिखाई देती हैं। राजनैतिक प्रयोजनों के लिए भी किन्नर समुदायों को प्रलोभन के मार्ग से शोषित क्या जाता है और कुछ परिस्थितियों में ये राजनीतिक हत्या के भी शिकार हो जाते हैं। प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली' उपन्यास एक किन्नर समुदाय में गद्दी अर्थात शीर्ष नायकत्व को हासिल करने के लिए चलाने वाले षडयंत्र और परस्पर संघर्ष को दर्शाता है। आकर्षक किन्नर अक्सर तथाकथित संभ्रांत वर्ग के विकृत यौनाचार के शिकार हो जाते हैं, ऐसी घटनाओं को किन्नर कथा साहित्य में प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया गया है। जहाँ एक ओर प्रदीप सौरभ किन्नरों के सशक्तिकरण के लिए आवाज़ उठाते हैं वहीं दूसरी ओर महेंद्र भीष्म किन्नरों के मानवाधिकारों के लिए पक्षधर बनकर खड़े होते हैं। किन्नर जन्म लेने वाला व्यक्ति बार-बार सवाल करता है कि उसके जन्म के लिए उसका तो कोई दोष नहीं किन्तु समाज उसे इसका दंड क्यों देता है? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका सामाधान कोई सभ्य समाज देने में समर्थ नहीं दिखाई देता। समाज में किन्नरों की स्वीकार्यता महत्वपूर्ण मुद्दा है। भारतीय समाज में एक विचित्र दोहरापन मौजूद है जो सदियों से लिंग के आधार पर सामाजिक अधिकार तय करता है। स्त्रीलिंग और पुल्लिंग इन दोनों को सामाजिक सामाजिक संरचना का आधार माना गया है। ये दोनों मिलकर ही जीवन का सृजन करते हैं जिससे जीवन की शृंखला पीढ़ियों का निर्माण करती है। जननेन्द्रिय के बिना मनुष्य की प्रजनन शक्ति का ह्रास सुनिश्चित है। संतानोत्पत्ति स्त्री-पुरुष के वैवाहिक जीवन का महत्वपूर्ण सामाजिक प्रदेय है। लिंगविहीन या नपुंसक मनुष्य इस अधिकार से वंचित हो जाता है जिससे समाज में इस श्रेणी के मनुष्यों को असामाजिक और अवांछित माना जाता है। इस समुदाय के प्रति सभ्य समाज की यह मानसिकता मानवोचित नहीं है। किन्नर जीवन को जीने के लिए अभिशप्त समुदाय के प्रति मानवीय संवेदना को जागृत करने का गुरुतर दायित्व साहित्यकार और सामाजिक आंदोलनकारियों ने स्वीकार किया। [7,8,9]

II. विचार-विमर्श

किन्नर को जीवन के प्रारम्भ से लेकर अंत तक अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उसकी सबसे बड़ी चुनौती उसकी देह होती है। दैहिक बनावट और अंत:करण की भावनाओं में सामंजस्य न होने के कारण वे मानसिक वेदना तो सहते ही हैं, साथ ही कई बार उनकी देह शोषण का शिकार भी हो जाती है। लोगों के घरों में मंगल अवसरों पर अपनी वेदना को छिपाकर हर्षित होने वाले किन्नरों की देह लोगों में प्राय: आकर्षण का केंद्र बनी रहती है। इसीलिए कुछ कुंठित मानसिकता के लोग उनका दैहिक शोषण करते हैं। किन्नर समाज की यह एक यथार्थ स्थिति है जिसे हिंदी उपन्यासों में मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। नई सदी का हिंदी कथा साहित्य किन्नर समुदाय की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अस्मिता की पड़ताल करने में कमोबेश सफल हुआ है।

उपन्यासों में वर्णित किन्नर समाज की चुनौतियाँ :

किन्नर समाज का वह वर्ग है जो शारीरिक रूप या यौनिक अंगों के विशेष संदर्भ में अपूर्ण माना जाता है। किन्नर की बाह्य देह का उसके अंत:करण के भावों से तालमेल नहीं होता अर्थात पुरुष देह में स्त्रियोचित गुण होते हैं या स्त्री की देह में पुरुष देह जैसी मांसलता होती है। वास्तव में यह एक जैविक अनिश्चितता के कारण होता है। इसी जैविक अनिश्चितता के कारण तह वर्ग समाज के अन्य वर्गों की भाँति सामान्य प्रतीत नहीं होता। इस संबंध में समाज में भी अनेक प्रकार के भ्रम व्याप्त हैं जिस कारण किन्नरों का जीवन सामान्य मनुष्यों के जीवन से सर्वथा भिन्न दिखाई देता है। किन्नर अपने जीवन काल में अनेक विसंगतियो का सामना करता है। इन विसंगतियों को साहित्य के माध्यम से समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने का चुनौतीपूर्ण अभियान हिंदी के कतिपय कथाकारों ने

श्रमसाध्य ढंग से किया। इन सभी लेखकों ने किन्नर जीवन की वास्तविकताओं को समझने के लिए विभिन्न शहरों में बसे विभिन्न किन्नर समुदायों के बीच जाकर समाजशास्त्रीय अनुसंधान किया। इन लेखकों के द्वारा किन्नरों के विभिन्न वर्गों, उनके सामाजिक जीवन, रीतिरिवाज़, परम्पराएँ, रूढ़ियाँ, धार्मिक मान्यताएँ, उनकी आजीविका के स्रोत और उनके कामकाज आदि का विस्तृत अध्ययन किया गया। हिंदी में रचित किन्नर जीवनप्रधान उपन्यासों में लेखकों के द्वारा किए गए सर्वेक्षण और अध्ययन के आधार पर ही कथानकों को बुना गया और पात्रों का चयन किया गया। इन उपन्यासों के सभी किन्नर पात्र पुरुष और स्त्री वेश में भिन्न-भिन्न सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में अपने अभिशप्त जीवन की विडम्बना को भोगते हुए प्रतीत होते हैं। विभिन्न परिवेशों में किन्नर पात्रों के जीवन की कथाओं को लेखकों ने किन्नरों की भाषाई चेतना के संग, उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा रूपों में ही प्रस्तुत किया है। इन उपन्यासों में किन्नरों की विशिष्ट भाषाई चेतना स्पष्ट दिखाई देती है। समाज की रूढ़ मानसिकता के कारण किन्नरों की छवि ऐसी बन चुकी है कि माता-पिता भी जननांग की विकलांगता के साथ जन्मी अपनी ही संतान को त्याग देते हैं। इस तरह जीवन के प्रथम पड़ाव पर ही नपुंसक शिशु को इस चुनौती का सामना करना पड़ता है। इस सामाजिक कुरीति का कोई समाधान दिखाई नहीं देता। ऐसी संतान को त्याग देने की मानसिकता समाज के सामन्य से लेकर उच्चवर्ग, राजा-महाराजा हर वर्ग में व्याप्त है। 'किन्नर कथा' उपन्यास के आलोक में इस तथ्य को स्पष्ट किया जा सकता है। इस उपन्यास में जैतपुर के राजा जगतराज सिंह के घर कन्या (किन्नर) का जन्म होता है, परंतु वह अपनी लोकमर्यादा की रक्षा के लिए अपनी नवजात कन्या को मरवा देने का हुक्म दे देता है। किन्तु उनका दीवान पंचम सिंह उस शिशु के प्राण नहीं ले पाता है। वह शिशु एक किन्नर के हाथों सौंपी दी जाती है। 'किन्नर गुरु' तारा उस कन्या का पालन पोषण करती है। राजा जगतराज सिंह को लोकलाज ज़्यादा प्रिय थी। समाज में यही मानसिकता विद्यमान है जिसका चित्रण सभी उपन्यासों मे एक समान दिखाई देता है। पैदा होते ही किन्नर शिशु को अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ती है। कभी-कभी संयोग से यदि किन्नर के रूप में जन्मे शिशु के प्राण बच जाएँ तो भी उसे अपने परिवार के साथ जीवन बिताने का सुख प्राप्त नहीं होता क्योंकि उसे जन्म के बाद किन्नर समुदाय के सुपुर्द कर दिया जाता है या किन्नर समुदाय जबरन उसे अपने समुदाय में शामिल करने के लिए लेकर चले जाते हैं। चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा' के नायक विनोद की स्थिति ऐसी ही है। उसकी माँ उसके किन्नर होने के बावजूद उसे अपनी अन्य संतानों की भाँति ही प्रेम करती है, परंतु पिता के लिए वह चिंता का विषय बन जाता है। विनोद का भाई भी उससे घृणा करता है। उसकी माँ के सिवा उसे कोई अपने समाज में नहीं रहने देना चाहता। इसलिए वे निर्दयतापूर्वक विनोद को किन्नरों को सौंप देते हैं। विनोद की इस वेदना को समूचे उपन्यास में विनोद के द्वारा उसकी माँ को क्रमश: लिखे जाने वाले पत्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। पत्रों के माध्यम से वह अपनी मानसिकता और अपनी उलझनें व्यक्त करता है। वह अपने अधिकारों की लड़ाई अकेले लड़ता है।[10,11,12] वह मानो समस्त किन्नर समुदाय के लिए मानवाधिकार की माँग करता है। किन्नरों को भी उनकी इच्छानुसार पुल्लिंग या स्त्रीलिंग श्रेणी में शामिल करने की माँग करता है। किन्नर जीवन पर रचित उपन्यासों में 'नाला सोपारा' का स्थान महत्वपूर्ण है। आत्मकथात्मक शैली में रचित यह उपन्यास किन्नर युवक की शारीरिक और मानसिक वेदना को व्यक्त करता है। किन्नर समुदायों के माध्यम से राजनेता अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। उपन्यास के अंत में विनोद ऐसी ही राजनीतिक हत्या का शिकार होकर अपनी जान गँवा देता है। उपन्यास में पूनम जोशी नामक किन्नर के साथ हुए बलात्कार के प्रसंग से यह तथ्य उजागर होता है कि किन्नरों की देह कुंठित और विकृत यौन शोषण के अभ्यस्त लोगों के लिए अचंभा पैदा करती है और दिल बहलाने का सस्ता साधन बन जाते हैं। बेबसी और लाचारी में किन्नर प्रतिरोध नहीं कर पाते और अंत में मौत का शिकार हो जाते हैं। चित्रा मुद्गल के उपन्यास के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि यौनिक अपूर्णता के बावजूद किन्नरों को शारीरिक यौनाचार का शिकार होना पड़ता है। अत: उनको समाज कि दोहरी मार झेलनी पड़ती है। पहला, अपूर्ण देह के साथ जीवनयापन करना पड़ता है और दूसरा बलात्कार का दंश भी सहना पड़ता है। शारीरिक विपन्नता की विडंबनाओं के अतिरिक्त एक अन्य चुनौती आर्थिक विपन्नता के रूप में किन्नर समुदाय को झेलनी पड़ती है। किन्नर समुदाय लोगों के मगलपर्वों और उत्सवों पर नाच गाकर, तालियाँ पीटकर अपना जीविकोपार्जन करते हैं। भारत में सरकारी नीतियाँ भी उनके अनुकूल नहीं हैं। सरकारी नौकरी प्राप्त करने का कोई प्रावधान नहीं है। इसलिए वह प्राय: असहाय अवस्था में सड़कों पर, रेलगाड़ियों में तालियाँ पीटकर माँगते हुए दिखाई देते हैं। 'नाला सोपारा' का मुख्य पात्र विनोद उर्फ बिन्नी किन्नर समुदाय में रहते हुए पढ़ाई पूरी करने के लिए गाड़ियाँ साफ़ करने का काम करता है। इस प्रकार की जागरूकता किन्नर समुदायों में नहीं के बराबर है क्योंकि समाज उन्हें मुख्य धारा में शामिल होने नहीं देता। किन्नर समुदाय में शिक्षा का अभाव होता है। उन्हें शिक्षा का अवसर मुहैया नहीं कराया जाता। इसके लिए आवश्यक है किन्नर समुदाय में चेतना का संचरण। यदि वे स्वयं चेतन हो जाएँगे तो वे स्वयं अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं।

प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली' उपन्यास की पात्र 'मणि' के साथ स्कूल में एक अप्रिय घटना घटती है जो उसके जीवन को बदलकर रख देती है। एक दिन स्कूल में कुछ बदमाश लड़के उसे नंगा कर उसके गुप्तांगों को देखकर हिजड़ा, हिजड़ा! चिल्लाने लगते हैं। इस अपमान जनित व्यवहार से प्रताड़ित होकर मणि स्कूल छोड़ने के लिए विवश हो जाती है। इसी तरह के प्रसंग का चित्रण 'गुलाम मंडी' (निर्मला भुराडिया) में हुआ है। छात्र का लिंग पहचानने के लिए उसकी चड्डी उतरवाई जाती है और फिर उसे जूतों से मारकर स्कूल से निष्कासित किया जाता है। इस तरह इस वर्ग को सभी क्षेत्रों में हेय दृष्टि से देखा जाता है। आर्थिक क्षेत्र भी इस दृष्टि से अपवाद नहीं है। आर्थिक क्षेत्र में इस वर्ग के जुड़े व्यक्ति का कार्यरत होना असंभव बना दिया गया है। इस वर्ग को लेकर परिवार और समाज के मध्य मौजूद द्वंद्व को लेखकों द्वारा स्पष्ट करने के प्रयास हुए हैं। नीरजा माधव ने 'यमदीप' में इस द्वंद्व को पूरी संवेदना से उभारा है। 'नाज बीबी' नामक बालिका को उसके हिजड़ा होने के सच जब नहीं छिपाया जा सकता, तब उसके माता-पिता को उसे महताब गुरु नामक एक किन्नर समुदाय के मुखिया को असहाय स्थिति में सौंप देना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उनके पास कोई

दूसरा विकल्प नहीं था। महताब गुरु के अनुसार उस बालिका के माता-पिता उस बस्ती में रह नहीं सकते थे और अपनी बेटी को अपने साथ नहीं रख सकते थे और अपने को हिजड़ी के बाप कहलाने के अपमान के साथ नहीं जीवन बिता सकते थे। इसीलिए इसे किन्नरों को दे देने के सिवाय उनके पास और कोई रास्ता न था।

महेंद्र भीष्म द्वारा किन्नर जीवन पर रचित दूसरा उपन्यास है 'मैं पायल'। आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत यह उपन्यास लखनऊ की किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन संघर्ष पर आधारित है। 'मैं पायल' उपन्यास में देह व्यापार के दो पक्षों को चित्रित किया गया है। प्रथम 'अनवर' नामक पात्र की माँ का देह व्यापार में संलिप्त होना तथा दूसरा हिजड़ों का देह व्यापार में शामिल हो जाना, दोनों समूहों की देह व्यापार में संलिप्तता का मूल कारण ग़रीबी है।

थर्ड जेंडर अन्य लिंगी अर्थात किन्नर समुदाय के अतिरिक्त एक और वर्ग है जिसे ट्रांसजेंडर या लिंग परिवर्तित मनुष्यों का है। वह किन्नर जिसमें पुरुष या स्त्रियोचित प्रवृत्तियाँ हावी होती जाती हैं और वह तदनुरूप से ही व्यवहार करता है। ऐसी स्थिति में किन्नर स्वेच्छा से पुरुष या स्त्री के रूप में अपना शारीरिक रूपान्तरण कर सकता है। नव्यतम कॉस्मेटिक सर्जरी व लिंग परिवर्तन के लिए समुचित शल्य प्रक्रिया उपलब्ध होने के कारण अब यह संभव हो गया है। इस प्रक्रिया के द्वारा पुरुष और स्त्री अपना लिंग परिवर्तन कर सकती हैं। इस संदर्भ में उच्चमध्य वर्गीय परिवार में बेटे के रूप में जन्मा 'सोमनाथ' धीरे-धीरे अपने भीतर विकसित स्त्रैण प्रवृत्तियों का आभास करता है। उसका लड़कों के प्रति आकर्षण उसके अस्वाभाविक व्यावहार के प्रति माता-पिता और अन्य लोगों का ध्यान आकर्षित करता है। यही सोमनाथ अंत में मानोबी बद्योपाध्याय के नाम से सुंदर युवती के रूप में परिवर्तित हो जाती है क्योंकि उसमें नारी मन बसता था। स्त्री में स्वयं को बदलने और स्थापित करने के लिए सोमनाथ उर्फ़ मानोबी को जिन यातनाओं और अपमान से भरे जीवन से संघर्ष करना पड़ा, इसे मानोबी ने स्वयं आत्मकथा में प्रस्तुत किया है। मानोबी बंद्योपाध्याय वह शख़्सीयत है जिसने अपने कठिन संघर्ष के द्वारा पर दुनिया भर का तिरस्कार, हिक़ारत, अपमान, उपेक्षा और नफ़रत को झेलते हुए पारिवारिक समर्थन के बल पर उच्च शिक्षा पूरी की। बांग्ला साहित्य में एम ए , एम फिल और पीएच डी की उपाधियाँ प्राप्त कीं। और वह पश्चिम बंगाल में एक कॉलेज की भारत की प्रथम ट्रांसजेडर प्रिंसिपल का कार्यभार कुशलतापूर्वक सँभाल रहीं हैं। इस संघर्ष को उन्होंने अपनी आत्मकथा में पिरोया है जो रोचक और रोमांचक दोनों है। [13,14,15]

अपनी आत्मकथा 'पुरुष तन में फंसा मेरा नारी मन' को पाठकों को समर्पित करते हुए वह लिखती हैं – "उन सबके नाम, जिन्होंने मुझे अपमानित किया और अवमानव कह कर जीवन के हाशिये पर धकेल दिया। उन्हीं के कारण मुझे लड़ने की ताक़त मिली और मैं जीवन में आगे बढ़ पाई। आशा करती हूँ कि पुस्तक मुझ जैसों के लिए प्रेरणात्मक सिद्ध होगी और वे भी जीवन में सफल हो पाएँगे।" लिंग परिवर्तन की सर्जरी के बाद क़ानूनी तौर पर सोमनाथ ने अपना नाम बदल लिया। इस संदर्भ में वह लिखती हैं – "क्योंकि मुझे लगता था कि मेरी देह और आत्मा एक स्त्री की हो गई थी, तो मेरे नाम से भी वही झलकना चाहिए। सोमनाथ, भगवान शिव का एक नाम है, वे एक पुरुष थे और मैं अपने लिए आदर व सम्मान की इस तलाश में उनके नाम का अपमान नहीं करना चाहती थी। मैंने मानोबी नाम इसलिए चुना क्योंकि इसका अर्थ है सर्वोत्कृष्ट मादा – प्रकृति – जैसा प्रकृति ने उसे बनाया है। मैंने अपना नाम सोमनाथ से बदलकर मानोबी रखा और यह काम कोर्ट में मेजिस्ट्रेट के सामने किया गया। इसके बाद मैंने शीर्षस्थ अख़बारों में अपना नाम और लिंग बदलने के बारे में सूचित किया। जब मुझे थीसिस के लिए अपना नाम बदलवाना था तो ये दस्तावेज़ बहुत काम आये। मैंने 2005 में पीएच डी का काम पूरा कर लिया पर डॉक्टरेट की डिग्री विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में 2006 में दी गयी।"

मानोबी बंद्योपाध्याय का आत्मवक्तव्य ग़ौरतलब है जो आत्मककथा के प्रारम्भ में प्रस्तुत किया गया है। " कितनी बार ऐसा हुआ है कि आपकी गाड़ी लाल बत्ती पर रुकी है और आपने कार की खिड़की के बाहर से, भीख माँगते हिजड़े को देख कर अपना मुँह मोड़ लिया है? क्या आपको बहुत घृणा महसूस हुई? क्या यह स्थिति उस अनुभूति से बदतर नहीं लगी जो आप गोद में बच्चा लिए किसी भिखारिन को भीख माँगते देख कर महसूस करते हैं? क्यों? मैं आपको बताती हूँ कि ऐसा क्यों है। आप हिजड़े से घृणा करते हैं क्योंकि आप उसके लिंग के साथ कोई पहचान नहीं जोड़ पाते। आप उसे एक विचित्र घृणित जीव, संभवत: एक अपराधी और निश्चित तौर पर एक अवमानव समझते हैं।

"मैं भी उनमें से एक हूँ। मुझे सारा जीवन लोगों के मुख से हिजड़ा, बृहन्नला, नपुंसक, खोजा, लौंडा .... जैसे शब्द सुनने पड़े हैं और मैंने जीवन के इतने वर्ष यह जानते हुए बिताए हैं कि एक जातिच्युत व परित्यक्त हूँ। क्या इससे मुझे पीड़ा का अनुभव हुआ? हुआ और इसने मुझे बुरी तरह से आहत किया है। परंतु चलन से बाहर हो चुके मुहावरे का प्रयोग करें तो कह सकते हैं कि समय बड़े-बड़े घाव भर देता है। मेरे मामले में इस कहावत ने थोड़ा सा अलग तरह से अपना प्रभाव दिखाया है। कष्ट तो अब भी है पर समय के साथ-साथ दर्द घट गया है। यह मेरे जीवन के एकांत क्षणों में मुझे आ घेरता है, जब मैं अपने अस्तित्व संबंधी यथार्थ से जूझ रही होती हूँ। मैं कौन हूँ और मैं एक पुरुष की देह में क़ैद स्त्री के रूप में क्यों जन्मी? मेरी नियति क्या है? मेरे इस रंग-बिरंगे बाहरी आवरण के नीचे, शर्मसार व चोटिल वैयक्तिकता छिपी है जो आज़ाद होने के लिए तरस रही है – अपनी शर्तों पर जीवन जीने की आज़ादी और जो मैं हूँ, उसी रूप में रहने की आज़ादी! मैं अपने लिए यही आज़ादी और स्वीकृति चाहती हूँ। मेरा बाहरी कठोर रूप तथा उदासीनता ऐसा कवच है जिसे मैंने अपनी संवेदनशीलता को जीवित रखने के लिए पहनना सीखा है। आज, अपने सौभाग्य के बल पर, मैंने ऐसी अद्भुत सफलता अर्जित कर ली है जो प्राय: मेरे जैसे लोगों के लिए नहीं होती। लेकिन यदि मेरा सफ़र कुछ और हुआ होता? मैं अपने

आप से बारंबार कहती हूँ कि अब मेरे लिए समय आ गया है कि मैं इस ख्याति के बीच प्रसन्न रहूँ परंतु भीतर ही भीतर कोई चेतावनी देता है। मेरी अंतरात्मा मुझसे कहती है कि मुझे अपने आसपास जो शोहरत और उत्सव दिखाई देता है, वह सब 'माया' है और मुझे एक संन्यासी के वीतराग की तरह ही इस प्रशंसा को ग्रहण करना चाहिए।

"मीडिया का कहना है कि कोई ट्रांसजेंडर पहली बार कॉलेज के प्रिंसिपल पद पर नियुक्त हुई, जो अपने-आप में एक उल्लेखनीय क़दम है। तब से मेरे फोन लगातार घनघनाते हैं, मेरी डेस्क पर अलग-अलग स्थानों पर होने वाले बधाई कार्यक्रमों के न्यौतों के अंबार लगे रहते हैं। मुझे यह मान कर बहुत ख़ुशी होती है कि जो लोग मेरा अभिनंदन करते हैं, उन्होंने मुझे उसी रूप में स्वीकार किया है, जो मैं हूँ, परंतु मैं उन खी-खी करते सुरों, तिरस्कार और दबी हँसी को कैसे अनसुना कर सकती हूँ, जो छिपाने की कोशिश करने पर भी नहीं छिपती? उनके लिए मैं एक 'तमाशा' भर हूँ और बिना पैसों का कोई तमाशा देखने को मिल रहा हो तो कौन नहीं देखना चाहेगा?

"मानसिक आघात और क्रोध, दो ऐसे भाव हैं जिन्हें मैंने दबाना और नज़र अंदाज़ करना सीखा है। ये मेरे मानसिक कवच का हिस्सा हैं, जिनसे मैं अपने आप को महफ़ूज़ रख पाती हूँ। मैंने अंतत: इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है कि मेरी उपलब्धियों का मेरे आस-पास के लोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उन्हें अब भी लगता है कि आज मैं भी नपुंसक हूँ और यही मेरी असली पहचान है। मुझे भावुक होने का अधिकार भी है, यह विचार अधिकतर लोगों को अनचीन्हा लगता है। मैं उन्हें दोष नहीं देती। मैं स्वयं को दोषी मानती हूँ कि मैंने ऐसी पीड़ा को नज़रअंदाज क्यों नहीं किया। मुझे तो बहुत पहले उनकी परवाह करनी छोड़ देनी चाहिए थी।

"ऐसा नहीं जीवन कि जीवन के इक्यावन वर्षों के दौरान, मुझे कभी अपने हिस्से का प्यार नहीं मिला। कई बार मेरा दिल भी टूटा, पर हर बार मुझे एक नया सबक़ सीखने का अवसर मिलता। मैंने बहुत अच्छी तरह और गहराई से प्यार किया और आशा करती हूँ कि मेरे साथी जहाँ भी हैं, वे चुपचाप मेरे उस रूप को याद करते होंगे। यह और बात है कि संबंध कभी मेरे लिए कारगर नहीं हो सके। जिन्होंने मुझे प्रेम किया, वे सदा मुझे छोड़ कर चले गए और हर बार जैसे मेरा कुछ हिस्सा भी, उनके संग कहीं खो गया।

"आज अपनी कहानी लिखने बैठी हूँ तो जैसे यादों का रेला उमड़ आया है। मैंने इस विश्वास के साथ यह सब लिखा है कि इस तरह समाज, हम जैसे लोगों को बेहतर तरीक़े से समझ सकेगा। हम बाहरी तौर पर दिखने में भले ही थोड़े अलग लगें, पर आपकी तरह ही इंसान हैं और आप सबकी तरह ही – शारीरिक और भावात्मक ज़रूरतें रखते हैं।" [14,15,16]

हिंदी सिनेमा में भी किन्नरों के जीवन और उनकी समस्याओं को सफलतापूर्वक चित्रित किया गया। प्रारम्भ में फ़िल्मों में हिजड़ा पात्र हास्य का विषय रहे किन्तु अब इसमें बदलाव आ गया है। किन्नर जीवन पर गंभीर सामाजिक सरोकार की फ़िल्में बनने लगी हैं। इस दृष्टि से 'वेलकम टु सज्जनपुर' (श्याम बेनेगल) 'सड़क' (महेश भट्ट), 'संघर्ष' (तनूजा चंद्रा), 'तमन्ना' (महेश भट्ट), 'मस्तकलंदर' (राहुल रवेल), 'फायर' (दीपा मेहता) आदि महत्वपूर्ण हैं। किन्नर जीवन और उससे जुड़ी समस्याओं पर साहित्य में विमर्श प्रारम्भ हो चुका है। भविष्य में जब इस समुदाय द्वारा मानव अधिकारों की लड़ाई व्यापक स्तर पर लड़ी जाएगी तो जागरूक समाज उनके साथ उनके पक्ष में खड़ा होगा। इस अभिशप्त समुदाय को बिना लिंग भेद के सामाजिक स्वीकार्यता प्राप्त होगी। इस दिशा में हिंदी कथाकारों ने स्तुत्य प्रयास कए हैं।

III. परिणाम

साहित्य और समाज का पारस्परिक रिश्ता अत्यन्त प्रगाढ़ होता है। समाज की हर धड़कन को साहित्य अपने भीतर समेटता है। क्यों कि साहित्य अपनी जमीन समाज से ही तलाशता है। इसलिए रचनाकार का दायित्व है कि वह अपने समय और समाज के सच को बेहतर व प्रभावशाली ढंग से समाज के सामने ले आये। वर्तमान समय विमर्शों का समय है। हिंदी में इन अस्मितामूलक विमर्शों ने समाज की मुख्यधारा से कोसो दूर हाशिए पर पड़े लोगों की व्यथा-कथा को समाज के सामने लाने में अपनी प्रभावी भूमिका निभायी है। इन विमर्शों ने मानवीय और सामाजिक दृष्टि से व्यक्ति को देखने का प्रयास किया है। इनमें स्त्री, दलित, आदिवासी, वृद्ध, अल्पसंख्यक, पर्यावरण विमर्श के साथ-साथ किन्नर विमर्श भी मुख्य हैं। 'किन्नर विमर्श' किन्नरों की सामाजिक अस्मिता और मानवाधिकारों के लिए उनके द्वारा किये जा रहे प्रयासों को सामाजिक पर्दे पर लाने का प्रयास करता है।

इसी क्रम में रचनाकारों ने समाज के एक ऐसे बहिष्कृत वर्ग को अपनी रचना का हिस्सा बनाया जो हाशिये पर रहकर कराह रहा है। इस दिशा में साहित्य की प्रमुख विधा यथा - कविता, कहानी, उपन्यास के माध्यम से थर्ड जेन्डरों के जीवन से सम्बन्धित संघर्षों को, उनकी मनः स्थिति और अधिकारों को प्रभावशाली ढंग से उकेरा गया है। यह समाज किन्नर समाज है। जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय के तहत 'थर्ड जेन्डर' का दर्जा अप्रैल, 2014 में दिया है। थर्ड जेन्डरों की विषम सामाजिक स्थिति, उनके मानवाधिकार और उनके जीवन संघर्ष तथा मानवीय गरिमा से जुड़े प्रश्न सब धीरे-धीरे ही सही लेकिन साहित्यिक गलियारों में विमर्श का केन्द्र बनते जा रहे हैं। ताकि समाज के अन्य लोगों की तरह उन्हें भी सम्मानपूर्वक मुख्य धारा में शामिल किया जा सके। थर्ड जेन्डरों के मन में भी अब बदलाव की चाहत देखने को मिलती है। वह भी अपने मानवाधिकारों के प्रति संघर्षरत दिखायी पड़ते हैं। चेतना, जागरूकता, शिक्षा के महत्त्व एवं मूल्य को समझते हुए, उसे आत्मसात् करते हुए अब अपने अधिकारों के लिए विभिन्न गैर

सरकारी संगठनों के माध्यम से उन्होंने आवाज उठाना प्रारम्भ कर दिया है। यह बदलते हुए भारत की बदलती हुई तस्वीर नये सामाजिक परिदृश्य में हमारे सामने है। फिर भी किन्नरों के प्रति समाज का जो नजरिया बदलना चाहिए था। वह अभी बदला नहीं है।
बीज शब्द : किन्नर अस्मिता, सामाजिक संघर्ष, चुनौतियाँ, नागरिक अधिकार और मानवीय गरिमा।

थर्ड जेंडर समुदाय के अपमान, शोषण व उपेक्षा की कहानी उनके जन्म से शुरू होकर मृत्यु तक अनवरत् रूप से चलती है। किन्नर, हिंजड़ा आदि तानों को लेकर वह अपना पूरा जीवन इसी समाज के बीच ढोते हैं। उन्हें उपहास की दृष्टि से देखा जाता है। समाज का होते हुए भी यह समुदाय सामाजिक संरचना के दायरे से बहुत बाहर हाशिए पर है। समाज ने उन्हें अपनी जरूरतों के हिसाब से चुना है। वह मांगलिक और शुभ अवसरों पर इनको नाच -गवाकर विदा कर देता है। दूसरा उनके आशीषों को प्राप्त करता है, जो समाज हित और सुख-समृद्धि से जुड़े होते हैं। कुछ रूपये-पैसे देकर इन्हें अपनी देहरी से विदा कर देना ही समाज अपनी जिम्मेदारी समझता है। शेष दिन केवल उपहास, रोजी-रोटी का संकट, तिरस्कार और उपेक्षा जैसी विपरीत परिस्थितियों से इन्हें गुजरना पड़ता है।

थर्ड जेन्डरों के समक्ष सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं राजनैतिक चुनौतियाँ हैं। इन चुनौतियों को पार करके ही वह सामाजिक अस्मिता के संकट के संघर्ष से मुक्त हो सकते हैं। थर्ड जेन्डर केन्द्रित कविताओं में इस समुदाय की संवेदना को और उसके जीवन के विविध संघर्षमय पक्षों को सशक्तता से अभिव्यक्त किया गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।[2,3,4]

स्त्री और पुरुष को ही हमारा समाज स्वीकार करता है। इनके अतिरिक्त लैंगिक विकृति के रूप में जन्में लोगों को‘ हिंजड़ा‘ या ‘किन्नर’ कहकर उन्हें समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है। एक किन्नर के रूप में जन्म लेने पर संघर्ष की पहली शुरूआत घर से ही होती है। जहाँ उसे केवल अपमान और तिरस्कार ही प्राप्त होता है –

जन्मते ही मेरे
चेहरे सबके
क्यूँ मायूस हुए
घर-भर के अधरों की
मुस्कानों पर कर्फ्यू लगे
देख मुझको सब ने मुख मोड़ा
किन्नर कहकर मुझको छोड़ा।1
पूजा बंसल की कविता ‘किन्नर व्यथा’ किन्नरों के मन की उस टीस को हमारे सामने लाती है। जिसे समाज देखने और सुनने से परहेज करता है। किन्नर का जन्म भी एक सामान्य बच्चे की तरह ही होता है। हर माँ-बाप के मन में अपने होने वाले बच्चे के सुनहरे भविष्य के लिए ढेर सारे सपने होते हैं। लेकिन किन्नर के रूप में जन्म लेने पर सबसे पहले उसके सपने टूटते हैं। सामाजिक अपमान और कलंक का भय उन्हें इस कदर सताता है कि वे इन्हें गुमनामी की दुनिया में ढकेलने में तनिक भी संकोच नहीं करते हैं। जहाँ जीवन भर दुःख, अपनों से बिछड़ने का दर्द और सामाजिक पहचान का संकट मुँह बायें इस कदर खड़ा होता है, कि वहाँ सिर्फ गंभीर मानसिक तनाव और छटपटाहट होती है। जन्म के बाद इस लैंगिक विकृति से जूझ रहे घर-परिवार और समाज की सोच और संवेदना कैसे बदल जाती है ? इस वेदना को कवयित्री ने इस प्रकार निरूपित किया है -
गुनाह बताओ उस बच्चे का,
उसने क्या अपराध किया
सजायाफ्ता-सा, माँ-बाप ने अलग किया
अलग बना दी बस्ती उसकी,
अलग जहान दिया
बीच समाज से होते उनको
समाजविहीन किया।2
किन्नरों की यथार्थपरक स्थिति संवेदनशून्य समाज की कलई खोल कर रख देती हैं। जन्म से लेकर साँस थमने तक उन्हें अपमान, तिरस्कार और घुटन के बीच ही जीना पड़ता है। रिश्ते-नाते और प्रेम के रसायन से दूर वे जिस अँधेरी गुफा में रहने को विवश हैं। वहाँ सिर्फ यातना ही यातना है। समाज उनके पक्ष में खड़ा न होकर वहाँ उनके प्रतिरोध में खड़ा होता है -
तानों से, धिक्कारों से,
उनकी रूह को छलनी किया
समाज की देखो हृदयहीनता,
न उनको घर संसार दिया।3
संगीता सिंह ‘भावना’ ने अपनी कविता ‘मेरे हमदम’ में किन्नर समुदाय को मानवीय दृष्टि से देखे जाने के लिए समाज से सवाल पूछती हैं। समाज की दकियानूसी सोच और दुव्र्यवहार पर रोष प्रकट करती हैं। बदलती हुई सामाजिक संवेदना पर चिन्ता व्यक्त करती हैं-
मत कर ऐसा बर्ताव

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 | Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, July-August 2024 |

ऐ रहमदिल दुनियांवालों
मैं भी एक जीता जागता इंसान हूँ,
तुम्हारी तरह।4

किन्नरों को जिस आत्मविश्वास और मजबूत मनोबल की आवश्यकता होती है। वह उसे समाज से इसलिए नहीं प्राप्त हो पाता है क्यों कि समाज उसे अपने से बिल्कुल भिन्न समझता है। किन्नरों के जीवन से जुड़ी हुई, समाज में फैली हुई तमाम भ्रांतियों ने किन्नरों को जो मानसिक आघात पहुँचाया है। वह उन्हें जीवन के आखिरी छोर तक विचलित करके रखती हैं। किन्नरों की मृत्यु और उनके अन्तिम संस्कार से जुड़ी हुई घटनाओं को जिस तरह से मनगढंत रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की जाती है। उसे रहस्यात्मक आवरण देने का प्रयास करना वह हमारे मनुष्य होने पर चिन्ता व्यक्त करती हैं-

अफवाहों का बाजार सजा है चहुँओर
अफवाह है मृत्यु का
मारे जाते हैं जूते और चप्पलों से किन्नर,
मरने के बाद
दुःख होता है दुनिया की इन बेतुकी बातों से।5

थर्ड जेन्डर के रूप में जन्म लेना और मृत्यु प्राप्त करना दोनों ही त्रासदीपूर्ण माना जाता है। समाज से उन्हें न जीते जी सम्मान मिलता है और न ही मरने पर। ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों ने किन्नरों के मनोबल और आत्मविश्वास को तोड़कर उसे समाज के आखिरी पायदान पर ढकेल दिया। किन्नरों की इसी व्यथा और मनोदशा को 'मेरे हमदम' कविता में अभिव्यक्त किया गया है -

जन्म लेकर तो अभिशप्त जीवन मिला दुनिया में पर,[5,6,7]
मरना भी हुआ दुस्कर
क्यों किया तूने यह भेदभाव विधाता,
जहाँ टूट रहा है मनोबल प्रतिपल।6

थर्ड जेन्डर अर्थात् तृतीय लिंगी भी हमारे जैसे ही होते हैं। उनमें भी संवेदना होती है। भावुकता होती है। महत्वाकांक्षा की भावना होती है। किन्नरों को भी यदि सामान्य बच्चों की तरह प्रेम, सम्मान और सहयोग मिले जो प्रायः सामान्य बच्चों को मिलता है। तो उनमें भी आत्मविश्वास उत्पन्न होगा। भविष्य की हजारों संभावनाओं के रास्ते खुलेंगे। सामाजिक उन्नयन और देश के विकास में उनकी भागीदारी भी बढ़ेगी। लेकिन लैंगिक विकृति के कारण उन्हें हाशिए पर धकेल देना न तो मानवोचित है और न ही न्यायोचित है। इस प्रकार किन्नरों के साथ भेदभाव की शुरूआत घर से शुरू होकर समाज तक अनवरत रूप से चलती रहती है। डा0 लता अग्रवाल की कविता 'काश! मेरे हिस्से भी आया होता मुकाम' में यही दर्द झलकता है -

काश!
मिली होती मुझे भी
माँ की ममता
बाबा का दुलार
तो मुझमें भी
जन्मीं होती
संभावनाएँ हजार।7

इसी प्रकार थर्ड जेन्डर भी समाज में अपनी स्वतंत्र पहचान स्थापित करना चाहता है। उसे भी हुनर और अवसर की आवश्यकता है। ताकि समाज की मुख्यधारा में वह गरिमा के साथ अपनी जगह बना सके। लेकिन विडम्बना ये है कि समाज में मांगलिक अवसरों को छोड़ दिया जाये तो इसके बाद उनकी स्वीकार्यता कहीं दिखायी नहीं पड़ती है। न उन्हें कोई रोजगार देना चाहता है। न कोई अवसर देना चाहता है। विवश होकर लोगों के बीच जाकर गा-बजाकर, नाचकर मनोरंजन करके अपना पेट भरकर गुमनामी की दुनिया में जीना पड़ता है। समाज के इस बदले रूप और व्यवहार ने थर्ड जेन्डर की पीड़ा, चिन्ता और चुनौतियों को दोगुना करने का काम किया है -

काश!
हाथ आया होता
मेरे भी
कोई हुनर
अवसर मिलता
मुझे भी दिखाने अपनी पहचान
तो यूँ घर-घर
ढोलक की थाप,
तालियों की गूँज बीच
खोये न होते मेरे
जज्बात।8

हमारे समाज में दिव्यांगों और किन्नरों को लेकर भिन्न-भिन्न प्रकार की धारणाएँ मौजूद हैं। समाज में दिव्यांगों को तो स्वीकार कर लिया जाता है। उन्हें रोजगार के अवसर भी उपलब्ध करा दिये जाते हैं। समाज उनके प्रति संवेदना भी रखता है। सरकार द्वारा प्रदत सुविधाओं से उनके जीवन में गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास भी किया जाता है। लेकिन लैंगिक विकृति होने के कारण किन्नरों के प्रति लोग न तो सम्मान का भाव रखते हैं। न ही संवेदना और मानवीयता रखते हैं। डा0 लता अग्रवाल की कविता 'लैंगिक विकलांग'[8,9,10] थर्ड जेन्डर की इसी समस्या पर चिन्तन करती हैं। उनके सामाजिक अधिकार के लिए स्वर बुलन्द करती हैं-

नहीं मैं कोई कलंक परिवार पर
याकि समाज पर
जैसे हाथ, पैर, आँख, कान से अधूरे होते हैं,
समाज में
विकलांग के नाम पर
पाते हैं संवेदना
जीते हैं विशेष अधिकार संग
मुझे क्यों नहीं
ससम्मान जीने का वह अधिकार ?
आखिर मैं भी तो
विकलांग हूँ
जी हाँ!
मैं लैंगिक विकलांग हूँ।9

किन्नर होना कोई अपराध नहीं है। केवल शारीरिक विकृति के आधार पर किसी के साथ भेदभाव करना, उसे अपमानित करना, घृणा करना और अपराधी बताना यह केवल संकुचित और कुत्सित मानसिकता को दर्शाता है। जो संवैधानिक रूप से भी अनुचित है। किन्नरों को केन्द्र में रखकर लिखे जा रहे तमाम साहित्य में इस विषय पर समाजशास्त्रीय दृष्टि से आज चिन्तन किया जा रहा है। किन्नरों की सामाजिक स्थिति में आवश्यक परिवर्तन हेतु और उनके सामाजिक अधिकार की प्राप्ति में यह बौद्धिक बहस महŸवपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ताकि एक स्वस्थ्य लोकतांत्रिक परम्परा के विकास में किन्नर समाज भी मजबूती से खड़ा हो सके और उसकी भागीदारी से यह लोकतंत्र समृद्ध और सुदृढ़ हो सके -

यूँ न देखो
हमें नफरत भरी
निगाहों से
न धिक्कारों हमें
यूँ गैरों की तरह
हाँ !
हम भी तुम्हारी तरह
उसी मालिक की रचना हैं
किन्नर हैं
इसमें कहाँ दोष है हमारा?10

लैंगिक रूप से अविकसित किन्नरों का जीवन कितना अभिशप्त होता है ? इस दर्द को सहने वाला समाज जीवन के आखिरी क्षण तक इससे उबर नहीं पाता है। अपनी इस स्थिति के लिए वह स्वयं दोषी नहीं होता है। फिर भी समाज उसे एक अपराधी के रूप में ही देखता है। उसकी शिकायत उस ईश्वरीय सत्ता से है, जो लोगों को गढ़ता है। उसकी कृति में यह विकृति ही उसे हाशिए पर डालकर जीवनपर्यन्त के लिए आँसू बहाने के लिए विवश कर देती हैं -

''मिलो कभी उस मालिक से
लेना कटघरे में उसे
पूछना उससे
अपनी कृति में छोड़कर विकृति
क्यों अभिशप्त किया
जीवन हमारा ?''11

थर्ड जेन्डर के समक्ष सबसे बड़ा संकट उनकी सामाजिक पहचान और अस्तित्व के साथ-साथ उनके रोजगार को लेकर है। थर्ड जेन्डर भी समाज के अन्य लोगों की तरह रोजगार के विभिन्न क्षेत्रों में एक मुकाम हासिल करना चाहता है। लेकिन समस्या ये है कि जब समाज उन्हें स्वीकार करने में संकोच करता है। तो भला रोजगार कैसे मुहैया करायेगा ? हर तरफ उसे ऐसे लोगों से जूझना पड़ता है जो उन्हें शक और अश्लील नजरों से देखते हैं। एक बेहतर जीवन के लिए गरिमामय सामाजिक वातावरण, प्रेम, सहयोग के साथ-साथ रोजगार की भी आवश्यकता होती है।[10,11,12] दुःख इस बात का है कि यह समुदाय इन सभी चीजों से वंचित है। और यही इसके सामाजिक पिछड़ेपन का कारण है -

सोचा कभी

कौन सा रोजगार
छोड़ा है हमारे लिए
पेट हमारा भी दिया है
मालिक ने
सो झोली फैलाते हैं
हम अपनी मेहनत की खाते हैं
क्या बुरा करते हैं, हम
तुम्हारी खुशियों में
जो बिन बुलाये
आ जाते हैं।12

किन्नरों में भी आत्मसम्मान का भाव निहित है। उनमें भी संवेदना और ममत्व का गुण है। उनकी भी भूमिका समाज निर्माण में है। वे किसी भ्रष्ट व्यवस्था का न अंग बनते हैं। और न ही किसी स्त्री के शोषण में सहभागी बनते हैं। डाॅ. लता अग्रवाल की कविता 'हाँ ! हम किन्नर हैं' में किन्नरों के व्यक्तित्व के इस पक्ष को रेखांकित किया गया है। जो उसे अन्य लोगों की भीड़ से अलग करता है -

हाँ! हम जुदा हैं
तुमसे अगर तो
फकत इतने कि
हम नहीं फैलाते भ्रष्टाचार
नहीं करते किसी बेबस पर वार
न फैलाते व्यभिचार
करते नहीं किसी नारी का बलात्कार
न जलाते हैं घर की आबरू को
दहेज की होली में
संवेदनाएँ डाली हैं मालिक ने
हमारी भी खोली में।13

राजनीति समाज के प्रति उŸारदायी होती है। उसका मंतव्य समाज के हर वर्ग का विकास होना चाहिए। पर किन्नरों के जीवन में गुणात्मक परिवर्तन के लिए जो गंभीर प्रयास सत्ता पक्ष की तरफ से होने चाहिए। वो संभवतः हुए नहीं। यह पीड़ा समूचे किन्नर समाज की है। उसकी तालियों की ध्वनि हर किसी को सुनाई पड़ती है। लेकिन देश की संसद में बैठे उन लोगों को नहीं सुनाई पड़ती है, जिसको चुनकर भेजने में किन्नर समाज की भी प्रभावी भूमिका रही है। संगम वर्मा की कविता 'ताली' किन्नरों के मुद्दें पर मौन संसद की आलोचना करती है और उसका ध्यानाकर्षण इस विषय पर कराने का एक रचनात्मक प्रयास करती है -

हाँ ! हम ताली पीटती हैं
निःसंकोच ताली पीटती हैं
हर बात पे और बिना बात पे भी
ताली की थपाक की गूँज
देर तक गूँजती है
हर कोई चैकन्ना हो जाता है
पर देश की संसद कभी चैकन्नी नहीं होती।14

दीप्ति कुशवाह की कविता 'निर्वीर्य दुनिया के बाशिंदे' उन चुनावी घोषणापत्रों और विकास के झूठे और प्रपंचपूर्ण वायदों की कलई खोल कर रख देती हैं। जिसमें किन्नर समाज की स्थिति में सुधार के प्रति कोई प्रतिबद्धता और प्राथमिकता नहीं दिखायी पड़ती है। मानवाधिकारों का दिन-रात राग अलापने वाले किन्नरों के शोषण और अधिकारों के लिए कोई आवाज क्यों नहीं उठाते हैं? -

यहाँ घोषणापत्रों में लुभावने वादे हैं
विकास की परिभाषाओं में
प्रदान की जा रही सुविधाएँ और आरक्षण
किसी भी शारीरिक कमी से पीड़ित लोगों को
वहीं इस अव्यव विशेष के अविकास के लिए
सहानुभूति भी नहीं है किसी के पास
कोई दण्ड तय नहीं
उनके लिए जो दुत्कारते हैं इन्हें
बरसाते हैं बहिष्कार के चाबुक
कोई दरवाजा नहीं खुलता इन पर
न मानव का न मानवाधिकार।15

किन्नरों की इस वीरानी दुनिया में उनका न कोई अपना है। और न ही उन्हें किसी का साथ मिल पाता है। न उनके साथ समाज का कोई सरोकार है। वे भटक रहे हैं। उन अँधेरी गुमनाम गलियों में जहाँ रोशनी की कोई किरण फूटती हुई दिखायी नहीं देती है। समाज की उदासीनता और किन्नरों की दुर्दशा से आहत होकर ही अंजना वर्मा की कविता 'किन्नर' अस्तित्व में आती है। समाज के भीतर किन्नरों के प्रति सामाजिक संवेदना और गहरे मानवीय सरोकार की चेतना पैदा करने के लिए एक बिगुल फूँकती है, यह कविता -

वे भटक रही हैं, कहाँ-कहाँ
पता खो गयी चिट्ठियों की तरह
कोई गंतव्य नहीं है उनका
गौर से देखो
वे बिना पते की
फाड़ी गई चिट्ठियाँ हैं
एक अदृश्य डस्टबिन में।16

IV. निष्कर्ष

समग्रतः हम कह सकते हैं कि वर्तमान भारतीय परिवेश में देश की आजादी के चैहत्तर वर्ष के बाद भी किन्नर समाज की समस्या और चुनौतियाँ यथावत बनी हुई हैं। [12,13,14]इक्कीसवीं सदी के इस ज्ञान, विज्ञान और तकनीकी से संपन्न दुनिया में किन्नर समाज के विकास के लिए, उनकी सामाजिक पहचान, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय से जुड़े प्रश्नों को दृष्टिगत रखते हुए एक ठोस रणनीति की आवश्यकता है। थर्ड जेन्डर केन्द्रित हिंदी कविता ने इस समुदाय पर वैचारिक बहस करके सत्ता, समाज, राजनीति और व्यवस्था को एक जनतांत्रिक सन्देश देने का एक बेहतरीन प्रयास किया।[15,16]

संदर्भ

1. संपादकः डॉ0 विजयेंद्र प्रताप सिंह, अस्तित्व और पहचान (थर्ड जेन्डर पर केन्द्रित कविता संग्रह) अमन प्रकाशन कानपुर, उ0प्र0, प्रथम संस्करण - 2019, पृष्ठ सं0-120
2. वही, पृष्ठ सं0-39
3. वही, पृष्ठ सं0-39
4. वही, पृष्ठ सं0-48
5. वही, पृष्ठ सं0-49
6. वही, पृष्ठ सं0-49
7. वही, पृष्ठ सं0-117
8. वही, पृष्ठ सं0-118
9. वही, पृष्ठ सं0-121
10. वही, पृष्ठ सं0-121
11. वही, पृष्ठ सं0-122
12. वही, पृष्ठ सं0-117
13. वही, पृष्ठ सं0-123
14. वही, पृष्ठ सं0-34
15. वही, पृष्ठ सं0-83
16. वही, पृष्ठ सं0-147

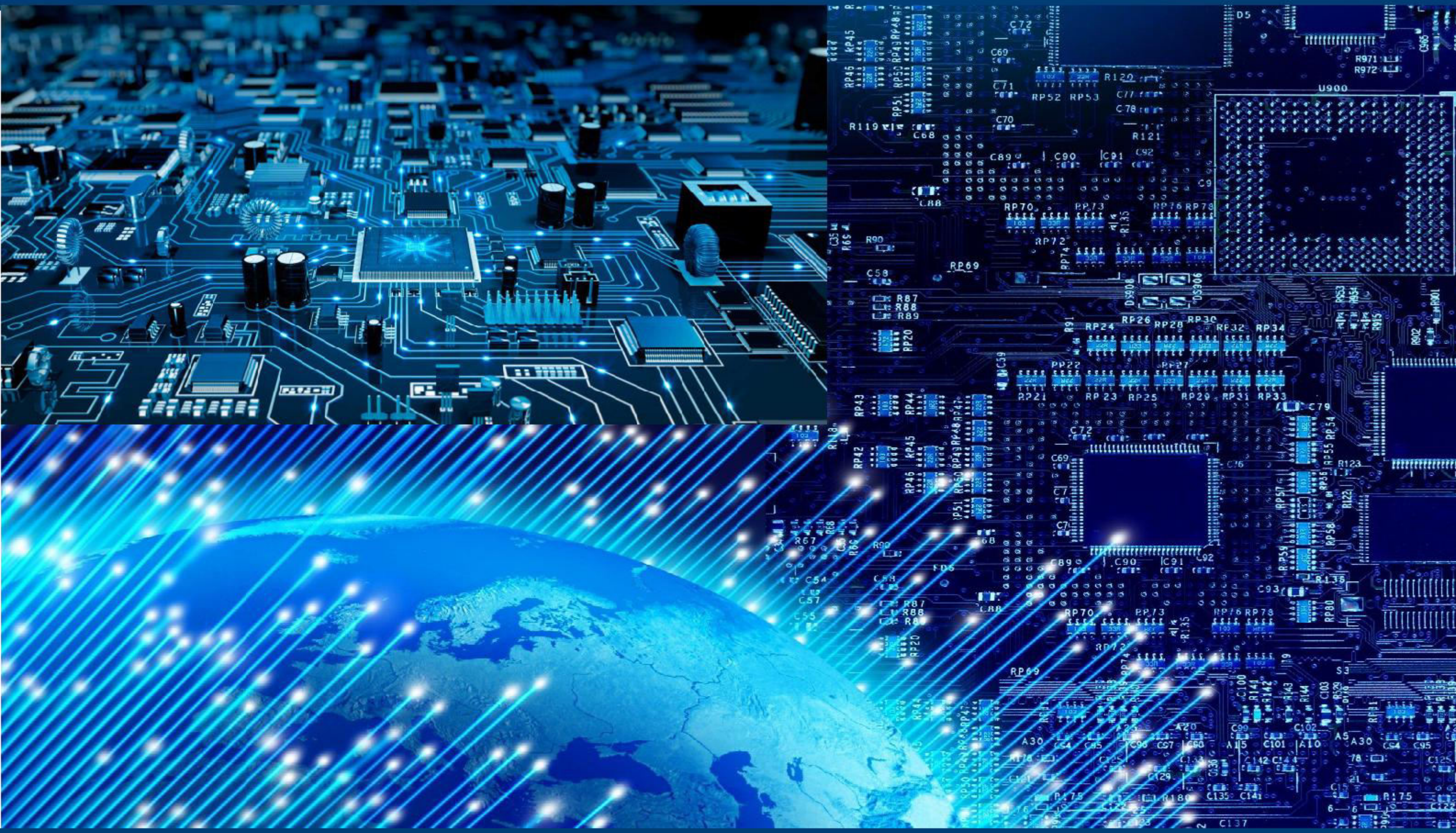

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |